Class — M.A. Semester II
Paper — VI
पाश्चात्य ज्ञानमीमांसा
(Western Epistemology)

Class — T.D.C. Part I के लिए भी
Paper — II
तत्वमीमांसा
(Metaphysics)

डॉ० पूनम शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर
दर्शनशास्त्र विभाग
आर० के० कॉलेज

Topic — व्यवहारिकतावादी सिद्धान्त
(Pragmatic Theory)

व्यवहारिकतावादी सिद्धान्त
(Pragmatic Theory)

ज्ञानमीमांसा के अन्तर्गत ज्ञान के स्वरूप एवं प्रामाणिकता का विवेचन किया जाता है। व्यावहारिक स्तर पर ज्ञान की सत्यता के स्वरूप (Nature) एवं उसकी जाँच (Test) का बहुत स्पष्ट भेद नहीं रहता है, किन्तु सैद्धान्तिक स्तर पर इन दोनों के बीच अन्तर होता है। ज्ञान की सत्यता के स्वरूप एवं उसकी जाँच की कसौटी से जुड़े हुए कई महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं। इनमें एक व्यवहारिकतावादी (परिणामवादी या उपयोगितावादी या अर्थक्रियावादी) सिद्धान्त है।

इस सिद्धान्त में किसी भी ज्ञान की सत्यता का आधार उससे होनेवाले प्रत्याशित परिणाम या उसकी उपयोगिता है। ज्ञान की सत्यता का मापदण्ड शुष्क

बुद्धि या आकारिक आधार नहीं होता, वरन् इन्द्रियानुभव के द्वारा सत्य को ग्रहण किया जाता है। यह विचार मुख्य रूप से निरपेक्षवाद एवं बुद्धिवाद के विरुद्ध प्रतिक्रिया के रूप में विकसित हुआ। इसका सबसे पहले प्रतिपादन अमेरिकी दार्शनिक चार्ल्स एस० पियर्स (C.S. Pierce) ने किया। उनके अनुसार किसी भी ज्ञान की सत्यता की परीक्षा तभी की जा सकती है, जब उससे संतोषजनक व्यावहारिक परिणाम निकलते हैं। जैसे — 'सामने रखा पदार्थ नमक है'- इस ज्ञान की सत्यता का परीक्षण तभी हो सकता है, जब उसे चखा जाये तथा परिणामस्वरूप नमकीन स्वाद की अनुभूति हो। उन्होंने सत्यता की व्याख्या एक कसौटी या मापदण्ड के रूप में की है, न कि सत्यता के अर्थ के रूप में।

इस सिद्धान्त का संवर्धन करने वालों में जेम्स (James), डिवी (Dewey), शीलर (Schiller) आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय रहा है। जेम्स के अनुसार सत्यता को ज्ञान का अनिवार्य, वस्तुनिष्ठ एवं आन्तरिक गुण नहीं कहा जा सकता है। सत्य मानव-निर्मित (मानव के द्वारा अर्जित) एवं आत्मनिष्ठ होता है। ज्ञान की उपयोगिता के आधार पर सत्य या असत्य कहा जा सकता है। जो ज्ञान वर्तमान में सत्य है, भविष्य में असत्य भी हो सकता है। इसलिए ज्ञान सापेक्ष (Relative) एवं परिवर्तनशील (Variable) होता है। मनुष्य इसे उसी रूप में उपार्जित करता है, जैसे- स्वास्थ्य, धन, शक्ति इत्यादि मानव के द्वारा अर्जित होते हैं। अतः ज्ञान की सत्यता एवं उसकी उपयोगिता में अभिन्न सम्बन्ध है। जो सत्य है, वह उपयोगी है तथा जो उपयोगी है, वह सत्य है। जेम्स ने कहा है —

"You can say of it either that it is weful because it is true or that it is true because it is useful. Both these uses mean exactly the same thing. ....."

इस सिद्धान्त के समर्थक ज्ञान को एक साधन मूल्य मानते हैं तथा ज्ञान की आन्तरिक मूल्यवत्ता का निराकरण करते हैं। शीलर के अनुसार सत्यता निर्णयों का गुणधर्म है। किसी भी निर्णय के द्वारा भविष्य में उससे व्यावहारिक परिणाम की अपेक्षा की जाती है। इसलिए किसी निर्णय की 'सत्यता' एवं 'सत्यता सम्बन्धी दावा' के बीच महत्वपूर्ण अन्तर होता है। उन्होंने कहा है कि प्रत्येक निर्णय सत्यता का दावा करता है, किन्तु अपने कुछ ही सफल हो पाता है। किसी निर्णय का सत्यता सम्बन्धी दावा जीवन में उससे मिलने वाली सफलता पर निर्भर है। उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि सत्यता एवं सत्यता सम्बन्धी दावा के बीच यह अन्तर निरपेक्ष एवं स्थिर न होकर सदा बदलता रहता है। अतः कोई भी कथन निरपेक्ष, सार्वभौम एवं अनिवार्य सत्य के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। उनके अनुसार गणित एवं तर्कशास्त्र के प्रकथन भी अनुभव पर आधारित होते हैं।

जॉन डिवी ने भी इसीप्रकार सत्यता को प्रमाणिक अभिकथनीयता (Warranted assertibility) कहा है। उनके अनुसार कोई भी प्रकथन प्रमाणीकरण की प्रक्रिया के द्वारा ही सत्य बनता है। कोई भी ज्ञान तभी सत्य है, जब उसका अभिकथन सफल व्यावहारिक परिणाम के द्वारा प्रमाणित किया जा सके। अतः उनके अनुसार निरपेक्ष एवं शाश्वत ज्ञान सम्भव नहीं है। समस्त चिन्तन प्रयोग एवं प्रतीक पर आधारित है।

इसप्रकार व्यवहारवादियों के अनुसार किसी भी क्षेत्र में निश्चित, अनिवार्य या सार्वभौम ज्ञान की प्राप्ति नहीं हो सकती है। ज्ञान सदैव सापेक्ष, परिवर्तनशील एवं तात्कालिक होता है।

इस सिद्धान्त में जीवन के व्यवहार-पक्ष को महत्वपूर्ण माना गया है। फिर भी इस सिद्धान्त के अनेक

दोष हैं। ये हैं—

(1) सत्यता एवं उपयोगिता को इस सिद्धान्त में समानार्थक माना गया है। यह दोषपूर्ण है।

(2) यदि सत्यता सापेक्षिक एवं परिवर्तनशील हो, तो उसका स्वरूप स्पष्ट नहीं होगा। इसके अतिरिक्त जो प्रमाणित करना कठिन है ऐसा सत्य समाज के लिए उपयोगी होने पर भी समाज को एक स्थिर मापदण्ड नहीं दे सकता। इसलिए यह सही सिद्धान्त नहीं है।

इसप्रकार इस सिद्धान्त में सत्यता की आत्मनिष्ठ व्याख्या प्रस्तुत की गयी है जिससे सत्यता एवं असत्यता का अन्तर समाप्त हो जाता है। उपयोग के आधार पर इस सिद्धान्त में सत्य की परिभाषा एवं उसकी कसौटी निर्धारित की गयी है। यह सत्यता का अपूर्ण एवं एकांगी स्वरूप है। इस दृष्टि से यह सिद्धान्त पूर्ण संगत एवं तर्कयुक्त नहीं है। फिर भी इस सिद्धान्त की विशेषता है कि इसमें सत्य को आकारगत रूप में परिभाषित न कर व्यवहार के स्तर पर लाने का प्रयास किया गया है।

नोट — विस्तृत अध्ययन के लिए ज्ञानमीमांसा से सम्बद्ध किताबें पढ़ें। जैसे —

(1) दर्शनशास्त्र की रूपरेखा — प्रो० राजेन्द्र प्रसाद
(2) तत्वमीमांसा एवं ज्ञानमीमांसा — केदार नाथ तिवारी

—X— —X—